साहित्यसुधा
साहित्यकारों की वेबपत्रिका
साहित्यकारों की रचना स्थली
वर्ष: 3, अंक 48, नवम्बर(प्रथम) , 2018

इंसाफ

डॉ० अनिल चड्डा

दरबार में सन्नाटा छा गया। किसी की समझ में नहीं आया की अचानक यह क्या हो गया। शहँशाह जहाँगीर की आवाज की गूँज ही बाकी रह गई थी -

“अब्दुर्रहीम खानखाना को अदालत में माबदौलत के सामने बतौर मुजरिम पेश किया जाये।“

यह वही अब्दुर्रहीम थे जो कभी शाहजादे सलीम, जो बाद में शहंशाह जहाँगीर बना था, के उस्ताद रह चुके थे। यह वही अब्दुर्रहीम थे जिनके पिता बैरामखां बाबर के दायें हाथ थे, हुमायूँ के ज़माने में जिनके कंधों पर मुगलिया सल्तनत का सारा भार टिका था और जो अकबर के तब सरपरस्त बने थे जब वह केवल तेरह वर्ष का था। उन्होंने मुगलिया सल्तनत की वफ़ादारी, नेकनीयती और दूरन्दाजी से सेवा करके उसको अपने एहसानों तले दबा रखा था। वह चाहते तो अकबर कि सरपरस्ती में धोखे से सल्तनत हथिया सकते थे। लेकिन उन्होंने ऐसा नहीं किया। उन्होंने नेकनीयती और वफ़ादारी को ख़ुदा की देन मान कर मुगलिया सल्तनत को सहेज कर रखा और उसे उसके उत्तराधिकारी को यथासमय सौंप दिया।

परन्तु, सियासत की चालें ऐसी होती हैं जिनमें अपरिपक्व राजा जल्दी ही फँस जाता है। ऐसी ही एक मिसाल अकबर ने दी। बैराम खां के दबदबे और शोहरत के कारण उसकी मर्जी के बिना मुगलिया सल्तनत में एक पत्ता भी नहीं हिल सकता था। लोग ईर्ष्यावश उसके खिलाफ चालें चल रहे थे। ऐसी ही एक चाल में अजीज कोका, जो आगे चल कर अब्दुर्रहीम खानखाना का साला बना, सफल

हुआ और बैराम खां को देश छोड़ कर जाने के लिए मजबूर होना पड़ा। और, रास्ते में ही उसका क़त्ल हो गया। ऐसा था मुगलिया सल्तनत का इंसाफ! एक ऐसा शख्स जिसने अपनी सारी शख्सियत, अपनी सारी जिन्दगी को मुगलिया सल्तनत के हवाले कर दिया था, एक गुमनामी की मौत मरा।

परन्तु, सही बात पता चलने पर अकबर ने अपनी भूल का प्रायश्चित करने की कोशिश की। उसने बैराम खां की पत्नी और बेटे को राजाश्रय दिया। बैराम खां के बेटे, अब्दुर्रहीम खानखाना को आगे चल कर अकबर के दरबार में बहुत ही महत्वपूर्ण व उच्च पदवी प्राप्त हुई।

हालांकि अब्दुर्रहीम शायराना तबीयत की शख्सियत का मालिक था, उसने मुगलिया सल्तनत के लिए युद्धों का भी नेतृत्व किया और फतह भी हासिल की। लेकिन जिन्दगी की लड़ाई में जो चतुरता होनी चाहिये, वह उसमें नहीं थी। साफगोई का वो कायल था। सच्चाई बयान करने से वह डरता नहीं था चाहे सिर भी कलम हो जाए। तिस पर वह जिद्दी भी था। अकबर उसकी इस प्रवृति से भलीभांति परिचित था। और फिर एक बार वह गल्त कदम उठा था, जिसका पछतावा अकबर को शायद सारे जीवन रहा। शायद यही वजह थी कि अब्दुर्रहीम पर अकबर हमेशा मेहरबान रहा।

अब्दुर्रहीम शहंशाह जहाँगीर के उस्ताद रह चुका था। इसलिये शायद वह उस पर अपने पिता से भी ज्यादा मेहरबान था। अब्दुर्रहीम खानखाना के रुतबे और ऐश्वर्य प्रसाधनों में अकबर के ज़माने से बढ़ोतरी ही हुई थी। सियासी बातों में भी उसका प्रभाव अच्छा-खासा बढ़ गया था।

यह सब कुछ तो था, लेकिन अब्दुर्रहीम खानखाना एक कलाकार था। उसके सीने में एक सच्चा और भावुक कवि छुपा बैठा था - जिसकी उसको कीमत चुकानी पड़ी। वह एक सीधा-सादा व्यक्ति था, इसलिये सियासती चालों को ढंग से समझ

नहीं पाता था। उसके अंदर छुपे हुए कवि ने कभी एक दोहा कहा था, जिसको सुन कर सभी मित्रों ने सराहा था। वाहवाही दी, पर किसी ने नेक सलाह नहीं दी।

राजदरबार लगा हुआ था। शहंशाह शायराना तबीयत में थे। रहीम से गुज़ारिश हुई। रहीम ने एक दोहा सुनाया। खूब वाहवाही लूटी।

एक कोने से फरमाईश हुई - "रहीमजी, राज सराहिये वाला दोहा भी तो हो जाए" ।

शहंशाह भी यह सोच कर कि हमारे राज की प्रशंसा ही होगी, फरमाईश कर बैठे।

अब अब्दुर्रहीम क्या करें? वह दोहा तो हकीकत था। अपने मन की आवाज थी। शहंशाह को सुनाने के लिए नहीं था, वो भी भरे दरबार में। दोनों तरफ से फंस चुके थे। नहीं सुनाते हैं तो शहंशाह खफ़ा, सुनाते हैं तो शाही गाज गिरेगी। अंदर के शायर ने बाहर के ओढ़े हुए मुखौटे पर विजय पाई और अब्दुर्रहीम खानखाना ने दोहा सुनाया -

"रहिमन राज सराहिये, ससि सम सुखद जो होय,
कहा बापुरौ भानु है, तप्यो तरैयन खोय।"

अर्थात, ऐसे ही राज्य की सराहना की जानी चाहिये जो चन्द्रमा के समान सभी को सुख देने वाला हो। वह राज्य किस काम का जो सूर्य के समान होता है, पर जिसमें एक भी तारा नहीं दिखता और वह अकेले ही तपता रहता है।

दरबार में समुन्द्र में तूफान उठने से पहले जैसी ख़ामोशी छा गई। किसी को काटो तो खून नहीं।

शहंशाह की गंभीर आवाज गूँजी, “ इसका मतलब पता है आपको?”

रहीम की हालत साँप के मुँह में छछूंदर जैसी हो गई। शिष्य गुरु की काबलियत को ललकार रहा था। अपने सादगीपन में वह यह नहीं समझ पाए कि आज वह उनका शिष्य नहीं, शहंशाह है।

“जी, जहाँपनाह।“

“तो फिर दरबार में हमारी और हमारी सल्तनत की तौहीन करने का मकसद? हमें भी तो मालूम पड़े कि आपका क्या बिगाड़ा है हमने?”

“जी, कुछ नहीं। बल्कि मेरी इज्जत और रुतबे में तो इज़ाफा ही हुआ है।“

“तो शायद इसीलिये भरे दरबार में हमारी तौहीन कर रहे हैं आप। लगता है हमें बदनाम करने की साज़िश में मशगूल हैं आप।“

“जी, कोई साज़िश नहीं। एक शायर के मन की बात है, जहाँपनाह।“

“तो आपका मन यही कहता है?”

रहीम क्या जवाब देते? दोहा तो वह कह ही चुके थे।

“अब्दुर्रहीम खानखाना, आप में से बगावत की बू आ रही है।“

“जहाँपनाह, यह बगावत नहीं, हकीकत है जिसे एक शायर मन ने समझा और परखा है। मेरी इल्तजा है कि हजूर मरहूम महान अकबर की तरह शायरों को आजादख्याली का मौका अता करें।“

जहरीली हँसी हँसते हुए शहंशाह ने कहा -

“तो गोया, अपने टुकड़ों पर पलने वाले शायरों को हम अपनी ही बेइज्जती और मुखालफत करने दें? वाह, खूब कही।“

फिर शाही हुक्म जारी हुआ। अब्दुर्रहीम खानखाना बतौर मुजरिम शहंशाह के सामने पेश हुए। तारीख गवाह है कि राजे-महाराजाओं के दरबार में सिर्फ चाटुकार कवि ही टिक पाए हैं। हकीकत बयान करने वालों को मुफ़लिसी में ही दिन बिताने पड़े। यही रहीम के साथ हुआ। उनसे उनके सारे ओहदे और जागीरें छीन ली गईं। शायद तक़दीर ही उनके खिलाफ थी। उनके बच्चे और पत्नी एक-एक कर चल बसे। जीवन के अंतिम पड़ाव पर वह बिलकुल अकेले और नि:सहाय रह गए तो नूरजहाँ की सिफारिश पर जहाँगीर का दिल पसीजा। अब्दुर्रहीम से छीनी गईं जागीरें व ओहदों को उन्हें लौटा दिया गया। लेकिन अब उनका वह क्या करते? क्या जहाँगीर उनके बीते दिन लौटा पाया? क्या उनकी मरहूम पत्नी और बच्चों को लौटा पाया? कभी नहीं। इतना बड़ा मूल्य चुकाना पड़ा एक कवि को सच्चाई बयान करने के लिए। क्या यही था मुगलिया इन्साफ?

कृपया रचनाकार को मेल भेज कर अपने विचारों से अवगत करायें